walking out...

स्वपथगामी

अंक - 4

दिसम्बर 2004

walking on...

जीवन का महत्त्वपूर्ण प्रश्न?

''क्या 'सही' में हम सिर्फ पैसे के लिए काम करते हैं? क्या पैसा हमारे लिए सब कुछ है? मैं ऐसा कौनसा कार्य करूँ, जिससे मुझे सन्तुष्टि मिले?''
– विनय कुमार, दिल्ली

''आधुनिक सभ्यता से ग्रस्त मानवता एक विनाशक प्रवाह में बढ़ रही है। मेरे जीवन में यह प्रश्न है कि इस प्रवाह को रोकने, इसे सुधारने या इसमें से निकलने की शक्ति कहाँ है? अपने आपको इस प्रवाह से हटकर कैसे नए आयामों के साथ जोड़ा जाए?''
– किशोर सन्त, उदयपुर

''संयुक्त परिवार के बिखराव की स्थिति में अपनी बेटी के साथ सीखने के मौके कैसे विकसित किए जाएँ कि उसे कभी किसी संस्थागत ढाँचे पर निर्भर न होना पड़े?''
– रामावतार सिंह, अजमेर

''समानता और आधुनिकता के बारे में अलग–अलग संस्थाओं और आन्दोलनों से मेरी जो धारणाएँ बनी हैं, वे सब एक ही पहलू पर आधारित है। अब मेरी यह खोज है कि इन पर कैसे पुनर्विचार करूँ, ताकि इनके अलग–अलग पहलुओं को भी समझ सकूँ?''
– अनीता बोरकर, नाशिक

''जिन्दगी में काफी–कुछ करने को है, जैसे – थिएटर, फिल्म मेकिंग, गाना, बाँसुरी बजाना ... मैं जब फिल्म मेकिंग करता हूँ तो बाँसुरी छूट जाती है, बाँसुरी बजाता हूँ तो थिएटर की प्रेक्टिस छूट जाती है। मैं कैसे इनके बीच सामंजस्य बिठाऊँ?''
– अनीश सिंह, दिल्ली

हम मानते हैं कि अर्थपूर्ण एवं सृजनात्मक जीवन जीने के लिए अपनी जिज्ञासा और प्रश्नों को जीवित रखना बहुत जरूरी है। जीवन के प्रश्न हमारी खोज को आगे बढ़ाते हैं और नए विकल्प बनाने के लिए प्रेरित करते हैं। साथ ही बनी–बनाई दुनिया के बाहर की सुन्दरता और ताकत को पहचानने में मदद करते हैं। व्यक्तिगत और सामूहिक स्तर पर हमारी जीवन यात्रा को नई दिशाओं की ओर ले जाने के लिए आपके जीवन के महत्त्वपूर्ण प्रश्न भी आमन्त्रित हैं।

''मैं अपनी जरूरतों और संस्था की जरूरतों के बीच कैसे सन्तुलन बिठाऊँ?''
– पीटर कोवाल्की, अमेरिका

''अपने जीवन में कला के अलग–अलग रूपों को कैसे पहचान सकता हूँ और कला को आगे बढ़ा सकता हूँ।''
– निर्मल प्रजापत, उदयपुर

नई तालीम और स्वपथगामी आन्दोलन

– रामावतार सिंह <ramawtarsingh@yahoo.co.in>

'आशादेवी आर्यनायकम् जन्मशताब्दी' के अवसर पर सेवाग्राम वर्धा में आयोजित राष्ट्रीय नई तालीम सम्मेलन में शामिल होने का अवसर मिला। सम्मेलन में श्री नारायणभाई देसाई के नई तालीम के अनुभवों व विचारों को सुनकर मुझे नई तालीम को नए दृष्टिकोण से समझने में मदद मिली। नारायण भाई मात्र एक दिन स्कूल गए थे और उस एक दिन में उन्होंने स्कूली वातावरण को भाँपकर प्रतिरोध–स्वरूप गाँधीजी को एक पत्र लिखा। उसके बाद वे नई तालीम के विविध प्रयोगों से होकर गुजरे और आज भी 'सम्पूर्ण क्रान्ति विद्यालय' में विविध प्रयोग कर रहे हैं। इनका पूरा जीवन स्वयं सीखने के प्रयोगों का अच्छा उदाहरण है। वे स्वयं एक स्वपथगामी हैं और ऐसे लोगों के लिए प्रेरक बन सकते हैं, जो स्कूली व्यवस्था में स्वयं को फिट नहीं समझते और स्वयं की रुचि एवं सोच के अनुरूप जीवन का रास्ता चुनना चाहते हैं। उनकी कुछ बातों के कुछ अंश और उस पर से नई तालीम के बारे में मेरी समझ प्रस्तुत हैं :–

'आज जगत् में मौत की ताकतों और जिन्दगी की ताकतों के बीच संघर्ष चल रहा है और नई तालीम के सामने यह चुनौती है कि वह जीवन की ताकतों को कैसे पुष्ट करे? मौत की ताकतों का एक यह मुख्य लक्षण है कि वह विभाजक होती है। तो जहाँ यह स्कूली–पद्धति पहुँचती है, वहाँ वह ग्राम से लेकर विश्व तक विभाजक ही सिद्ध होती है। दूसरा लक्षण है कि आधुनिक शिक्षा उपभोगवादी संस्कृति को पुष्ट करती है। इसके खिलाफ यदि कोई संस्कृति खड़ी रह सकती है, तो वह यज्ञ संस्कृति है, जिसे नई तालीम ने खड़ा करने का प्रयत्न किया। तीसरा, आज श्रम का स्थान सम्पत्ति ने ले लिया है और कैसे कुशलतापूर्वक कब्जा करना है, यह स्कूल सिखाती है। स्कूली–शिक्षा पूरी व्यवस्था का एक उपकरण है और व्यवस्था मौत की ताकतों की समर्थक है। सारी की सारी व्यवस्था अन्ततः सैनिक–शक्ति पर ही टिकती है। मौत की ताकतों से लड़ना नई तालीम के लिए चुनौती है।

जिन्दगी की ताकतों में कुछ ताकतें हैं, जिनका उपयोग नई तालीम को करना चाहिए। इसके लिए नाताशाही (रिश्ते बनाना) जोड़ने का कार्यक्रम करना पड़ेगा। दूसरा जहाँ यान्त्रिक श्रम का स्थान सृजनशीलता ने ले लिया है या जहाँ क्रिएटिविटी को ज्यादा महत्त्व दिया जाता है, वह भी जीवन की ताकतों में से है। ...नई तालीम के मूलतः तीन माध्यम माने जाते हैं – उद्योग, समाज और प्रकृति। इनके अलावा तीन और माध्यम हैं, जिन्हें आन्तरिक या आध्यात्मिक माध्यम कह सकते हैं। वे हैं – प्रीति, मुक्ति और अभिव्यक्ति।''

इन आधारों पर मैं अपने अनुभवों का विश्लेषण करूँ, तो लगता है कि उद्योग, समाज और प्रकृति से जो मैं सीख रहा हूँ, वो मेरे जीवन जीने की प्रक्रिया का महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। अपने हाथों से जब देशी खेती, चरखा चलाना, औषधीय पौधे उगाना व उनका उपयोग करना जैसे काम करता हूँ, तो प्रकृति और समाज के साथ जीवन्त रिश्ता कायम होता है। इन कामों के लिए मुझे किसी बड़े बाज़ार या व्यवस्था पर निर्भर होने की जरूरत नहीं है और इसीलिए मैं स्वयं को शोषणकारी प्रक्रियाओं, प्रतियोगिता की मानसिकता, अधिक धन कमाने की लालसा से भी मुक्त कर पाया हूँ। जबसे मैं अपने सीखने के माध्यम और प्रक्रियाएँ खुद तय करने लगा हूँ और मैं नौकरी की मानसिकता से भी मुक्त हुआ हूँ। इनमें मुझे अपनी कल्पनाशक्ति और सृजनात्मकता बढ़ाने का भी अवसर मिलता है, जो मेरे जीवन के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है।

''गाँधी विचार के अनुसार, मूल विचार में 'तत्व' और 'तन्त्र' दोनों होते हैं। विचार का 'तत्व' (जैसे सत्य, अहिंसा आदि तत्व हैं) सदैव स्थायी होता है, वह अबाधित होता है, किसी स्थान या परिस्थिति विशेष में बदलता नहीं है। लेकिन तन्त्र अकसर बदलता रहना चाहिए। जितना तन्त्र बदलेगा, नई तालीम भी नित–नई तालीम रहेगी। तन्त्र अगर बदलेगा नहीं तो नई तालीम भी पुरानी तालीम बन सकती है।''

गाँधीजी द्वारा किए गए नई तालीम के प्रयोग अंग्रेजी राज से उत्पन्न परिस्थितियों के अनुरूप थे। आज परिस्थितियाँ काफी बदल चुकी हैं। लेकिन आज भी नई तालीम के मूल तत्त्वों को समझने, लागू करने और नए प्रयोग करने की बेहद जरूरत है। मुझे लगता है कि नई तालीम के तन्त्र को ठीक उसी रूप में स्थापित करने के बजाय आज उसके नए–नए रूप खोजने की जरूरत है। स्वपथगामी नेटवर्क भी नई तालीम का एक रूप है, जिसमें हम अपने हुनर, प्रयोग और निजी अनुभवों को एक–दूसरे के साथ बॉटने का प्रयास करते हैं। नई तालीम के दर्शन के बारे में ओर समझने के लिए आप विनोबा भावे की पुस्तक 'शिक्षा विचार' पढ़ सकते हैं। श्री नारायणभाई देसाई से भी निम्न पते पर सम्पर्क कर सकते हैं :–

सम्पूर्ण क्रान्ति विद्यालय, वेड़छी (गुजरात) फोन : 02625–20074

मिट्टी को हाथ लगाने में आज हम शर्म क्यों करते हैं?

डिस्कवरी के उस पार

– राहुल अलवारेस <cna@sancharnet.in>

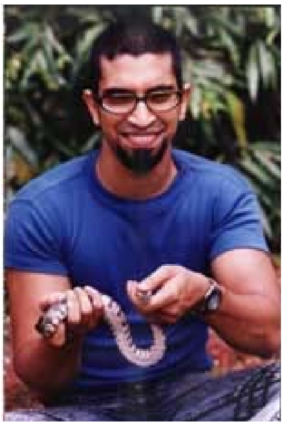

''आप नेशनल ज्योग्राफिक या डिस्कवरी चैनल तो जरूर देखते होंगे। इनमें जरूर आपके देखने लायक कुछ है'' अगर यही बात मुझे कोई दुबारा कहे तो मेरा सिर फट जाए! आजकल लोग यह मानने लगे हैं कि जानवर प्रेमी डिस्कवरी चैनल देखकर जानवरों के प्रति अपनी चिन्ता जता सकते हैं। मैं इन चैनलों में से किसी का विरोध नहीं कर रहा हूँ। इसमें दिखाई जाने वाली फोटोग्राफी; ख़ासकर समुद्र के भीतर की, वाकई बहुत ख़ूबसूरत है। लेकिन मैंने देखा है कि लोग केवल बैठकर यह देखना पसन्द करते हैं कि उनके टीवी में क्या दिखाया जा रहा है? लेकिन उनमें से कोई भी व्यक्ति यह खोजने में एक क्षण भी नहीं बिताता कि उनके आसपास में क्या हो रहा है?

मैं 23 साल का हूँ और तीन भाइयों में सबसे बड़ा हूँ। लगभग 15 साल पहले जब हमने टीवी खरीदने की जिद की, तो मेरे माता–पिता ने हमारे सामने यह सुझाव रखा था – ''टीवी उन लोगों के लिए है, जो असली चीजों और जगहों का अनुभव नहीं कर पाते। क्या तुम उन खूबसूरत जगहों और चीजों को वास्तव में देखना चाहते हो या उन्हें केवल टीवी–स्क्रीन पर देखने में ही खुश हो?'' हमारे सामने सीधी सी च्वॉइस थी – या तो टीवी खरीदना या इसके बजाय यात्रा करना। हमने यात्रा करना पसन्द किया और आज मैं गर्व से कहता हूँ कि हमने आज तक उस बुद्धू बक्से को घर के भीतर प्रवेश नहीं करने दिया। हमने इसके स्थान पर भारत के लगभग सभी हिस्सों की यात्राएँ की। मैंने साँप पकड़ना सीखा, मगरमच्छ पर काबू पाना सीखा, मकड़ियों और केंचुओं के बारे में अध्ययन किया और सरीसृप प्राणियों के बारे में सीखा। ये सब मेरे लिए इसलिए मुमकिन हो सका कि मैंने अपना समय टीवी के सामने नहीं गँवाया।

क्या आपने कभी यह देखने की कोशिश की है कि आपके पिछवाड़े में क्या–क्या हैं? क्या कभी अपने आसपास विभिन्न कीड़ों को ध्यान से देखा है? ग्रासहोप्पर, चींटियाँ, मक्खियाँ, मकड़ियाँ ... प्रायः हर घर में मिल जाते हैं। लेकिन ये शेरों और बाघों की धरती पर हमें नन्हें एलियन की तरह लगते हैं। हम इन मकड़ियों को अपनी सुरक्षा के लिए आसपास से हटा देते हैं, उनके घर नष्ट कर देते हैं? जबकि मकड़ियाँ मक्खियों और मच्छरों को खा लेती हैं। मच्छरों को नियन्त्रित करने के कई प्राकृतिक उपाय हैं!

बड़े शहरों में भी टोड, मेंढ़क, साँप और कई पक्षी मिल सकते हैं। लेकिन हम उनमें से कितनों के नाम जानते हैं, सिवाय कौए और कबूतर के? कितने जंगली पौधों के उपयोग हम जानते हैं? केंचुए लगभग सभी जगह पाए जाते हैं, लेकिन मुझे नहीं लगता कि इन टीवी दर्शकों में से कोई केंचुए एकत्रित करके वर्मी–कम्पोस्ट तैयार करते हों, जो हमारे रसोई के ढेर सारे कचरे को सड़ाकर तैयार किया जा सकता है।

अपने मित्र के घर टीवी पर मैं कई बार साँपों का कार्यक्रम देखने की कोशिश कर चुका हूँ, लेकिन कुछ ही समय बाद मैंने ये सब देखना छोड़ दिया। मुझे अहसास हुआ कि टीवी कार्यक्रमों में बिल्कुल सामान्य जानकारियाँ होती है। ये कार्यक्रम केवल हमारी ऑखों को आकर्षित करने के लिए डिजाइन किए जाते हैं। उनमें बिल्कुल भी जटिलता या गहराई नहीं होती और कुछ ही देर में आपकी रुचि खत्म हो जाएगी। कुछ सूचनाएँ आपके दिमाग में आसानी से घुस जाएँगी और तुरन्त ही निकल भी जाएँगी। मेरा दावा है कि यदि आप किसी कार्यक्रम को दो घण्टे तक बहुत ध्यान से भी देखते हैं, तो भी आपको कुछ खास हासिल नहीं हो सकता।

कई लोग स्नेक–शॉ देखते हैं, लेकिन उनमें से एक भी व्यक्ति किसी साँप की पहचान नहीं कर सकता। ...और इन टीवी दर्शकों में से 90 प्रतिशत लोग तो खुशी–खुशी साँप को कुचल देंगे, यदि कोई साँप उनके रास्ते से गुजर जाए तो। नेशनल ज्योग्राफिक चैनल के कई दर्शक मुझसे अकसर पूछते हैं – क्या यह सही है कि साँप बदला लेते हैं? क्या कुछ साँपों के दो सिर भी होते हैं?

टीवी कार्यक्रमों का एक खराब पहलू यह है कि वे अकसर सच्चाई से परे होते हैं। मुझे याद है जब मैंने मोनिटर लिजार्ड के बारे में 'थण्डर ड्रेगन' नामक एक कार्यक्रम देखा। इसमें मोनिटर लिजार्ड को बहुत भयानक तरह से और बनावटी आकर्षण के साथ दिखाया गया। जबकि सच्चाई यह है कि मोनिटर लिजार्ड बहुत साधारण, शान्त और डरपोक किस्म का प्राणी है।

अगर आप डिस्कवरी चैनल इसकी शानदार फोटोग्राफी के लिए देखते हैं और अपने आसपास की वास्तविक दुनिया के बारे में अगर आपकी कोई रुचि नहीं है, तो आपको मेरे इस लेख से विचलित होने की जरूरत नहीं है। लेकिन अगर आप वास्तव में प्रकृति के बारे में सीखने के लिए ये चैनल देखते हैं, तो इसके बजाय कुछ कीजिए। पक्षियों को देखना शुरू कीजिए, छोटे–छोटे जीवों को एकत्रित कीजिए, अलग–अलग पुस्तकें पढ़िए। ये सब बहुत आसान है, यदि आपकी जरा भी रुचि है। प्राणियों और वनस्पतियों के बारे में सीखने के लिए कोई विशेष संसाधनों की आवश्यकता नहीं है, ये सब मौके हमारे आसपास आसानी से उपलब्ध हो सकते हैं। मैंने अपने जीवन में सीखने के लिए किसी बाहर संसाधन का इन्तजार नहीं किया। मैं खुद की रुचि के बल पर अपनी खोज को जारी रख पा रहा हूँ। अपने अनुभव बाँटने के लिए मैं उन स्वपथगामियों को आमन्त्रित करता हूँ, जो जीव–जन्तुओं के बारे में रुचि रखते हैं।

राहुल के बारे में अधिक जानकारी के लिए वेबसाइट
www.geocities.com/rahulsnakesite
पर ई–मैगजीन 'Creepy Times' देखें।

फ्रिज के ढोंग से छुटकारा

– शम्मी नन्दा
<shammi_nanda@yahoo.com>

हमारे घर में फ्रिज आने से पहले, जब कभी रात का खाना बच जाता था, तो हम पहले यह मालूम करते थे कि पड़ौसियों ने खाना खा लिया है या नहीं? यदि तबतक उन्होंने खाना नहीं खाया होता, तो बचा हुआ खाना हम उन्हें खिलाते थे। वैसे पर्याप्त मात्रा में ही खाना बनता था, इसलिए अकसर खाना बचता भी नहीं था। अगर कुछ रोटियाँ बच भी जातीं, तो अगले दिन वे गाय या कुत्तों को खिला दी जातीं।

मेरे मुम्बई स्थित घर में जब पहली बार फ्रिज आया, तो मैं यह सोचकर खाना अधिक बनाने लगा कि खाना कहीं कम नहीं पड़ जाए, भले ही वह जरूरत से ज्यादा हो। क्योंकि अब उसे फ्रिज में रखा जा सकता था। अकसर फ्रिज में रखा गया खाना अगले दिन भी काम नहीं आता और अन्ततः उसे फेंकना ही पड़ता था। मुझे कभी ठण्डे पानी की जरूरत नहीं होती थी, इसलिए मुझे इस काम के लिए भी फ्रिज की जरूरत नहीं थी। अन्ततोगत्वा मैंने उसमें थोड़ा दूध रखना शुरू किया। मैं फ्रिज के दुष्प्रभावों और इससे ओजोन गैस के निरन्तर कम होने की समस्या को लेकर चिन्तित तो था, किन्तु खुद को कभी फ्रिज के मोह से मुक्त नहीं कर पाया। कई बार इसे कूड़े के ढेर में फेंकने का निश्चय भी किया!

एक दिन मैं शिक्षान्तर की वेबसाइट पर एक लेख पढ़ रहा था, जिसमें किसी ने लिखा था, ''मेरा प्रश्न यह नहीं है कि मैं दुनिया को कैसे बदलूँ? बल्कि मेरा सवाल है कि मैं दुनिया के साथ अपने रिश्ते को कैसे बदल सकती हूँ?'' उसने यह भी लिखा कि कैसे अमेरिकन लोग हमारी जीवन्तता को खत्म कर रहे हैं और सुपर बाजार में उनके शॉपिंग बैग भर रहे हैं। सबसे बदतर बात तो यह है कि वे सारी दुनिया से अपनी नकल करवाना चाहते हैं। मैंने महसूस किया कि स्कूलित होने के कारण पर्यावरण संरक्षण के बारे में हमारी धारणा भी संकुचित हो गई है। हम यह जानते हैं कि पेड़ काटना ग़लत है और इससे पर्यावरण पर बुरा असर होता है। लेकिन हम यह नहीं सोचते कि हमारा पूरा जीवन ही उन पर निर्भर है। जैसे एक तरफ पर्यावरण विषय पढ़ने वाले बच्चे हैं और दूसरी तरफ एक आदिवासी बच्चा, जिसका अस्तित्व ही पेड़ों पर निर्भर है; पेड़ों के प्रति दोनों का नजरिया बहुत भिन्न है। मुझे एक बिश्नोई कहावत याद आती है कि 'यदि तुम एक पेड़ को बचाने के लिए अपनी जान भी दे दो, तो कम है।' और मैंने ऐसे ढोंगी क्लब के बारे में भी पढ़ा है, जहाँ कुछ लोग अपने पाखण्ड और दिखावे की चर्चाएँ करते हैं। मुझे अहसास हुआ कि मेरा फ्रिज भी एक प्रकार का ढोंग ही था। मैंने फ्रिज के बिना बिताए दिनों पर भी विचार किया और महसूस किया कि मेरे वे दिन भी उतने ही खुशहाल थे, जितने कि फ्रिज आने के बाद के दिन। अन्त में मैंने यह फ्रिज अपनी भतीजी को देने का निश्चय किया, जो नया फ्रिज खरीदना चाहती थी। इसके जाने के बाद मेरे घर में कुछ जगह बन गई है और मैं खुद को बहुत हल्का महसूस करने लगा हूँ। अब मैं इस विषाक्त दुनिया के खिलाफ अपने योगदान के प्रति अधिक जागरुक हो गया हूँ।

अब मेरी नजर अपने दुपहिए वाहन पर है, किन्तु अभी तक मैं यह तय नहीं कर पाया हूँ कि इससे मुक्ति किस प्रकार मिले? अगर कोई मुझे उपयुक्त राह दिखा सकते हैं या सुझाव दे सकते हैं, तो मैं उनका स्वागत करता हूँ।

अपने गीत-अपनी धुन : मेरा जीवन

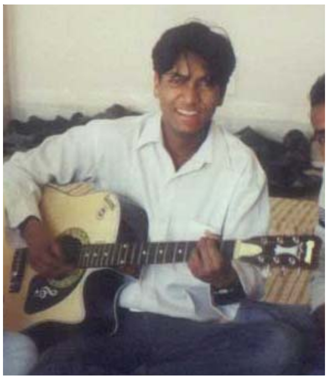

– विनय कुमार <vinay_manzil@rediffmail.com>

मुझे बचपन से ही संगीत में बहुत रूचि है। मैं जब भी संगीत सुनता हूँ तो मैं उसमें कुछ खो सा जाता हूँ। स्कूल में ऐसी कोई चीज नहीं थी जो कि संगीत से जुड़ी हों और मेरे घर में भी किसी को संगीत का शौक नहीं था। इसलिए मैं संगीत में रूचि रखने के बावजूद भी इससे जुड़ नहीं पाया।

जब मैं ग्यारवी कक्षा में था तब मैने सोच लिया कि अब मुझे संगीत के क्षेत्र में ही जाना है। एक दिन मुझे अपने एक दोस्त को गिटार बजाते देखकर लगा जैसे मुझे एक रास्ता मिल गया हो। मैने उसके साथ जाकर एक छोटा गिटार खरीद लिया और उसी से थोड़ा–थोड़ा सीखता रहा। परन्तु कुछ दिन बाद हमारा साथ छूट गया। तब तक मैं थोड़ा–बहुत बजाना सीख गया था। इसलिए मैंने निश्चय किया कि मैं स्वयं ही अभ्यास करके सीखने की कोशिश करूँगा। लगभग डेढ़ साल तक स्वयं ही गिटार पर अभ्यास करके सीखता रहा और कई जगह कई बार कार्यक्रमों में बजाया भी। परन्तु मुझे केवल इतना ही काफी नहीं लगा, मैं और भी सीखना चाहता था। उन दिनों मैं खान मार्केट में एक जगह जाया करता था, जिसे रविगुलाटी अपने घर में ''मंजिल सोसायटी'' के नाम से चलाते हैं और हम जैसे बच्चों की हमेशा किसी न किसी तरह से मदद करते है। मैं भी इससे जुड़ा और अपने संगीत का अभ्यास वहीं करने लगा। मैंने यहाँ कई लोगों से जान–पहचान बनाई और मुझे अपने आपको पहचानने का मौका मिला। मैं एक अच्छा गिटारिस्ट और गायक बनना चाहता हूँ, अतः मैंने अपने ''गाने'' का अभ्यास भी वहीं शुरू किया।

मुझे यहाँ ऐसे कई दोस्त मिले जो संगीत में रुचि रखते हैं, उनकी मदद से मुझे संगीत में और कई चीजें सीखने को मिली। इसमें से कुछ है – सुनीत, हेमन्त, राहुल। हमने मिलकर एक छोटा सा बेण्ड–ग्रुप बनाया है। हम अपने ही गीत लिखते हैं और धुन तैयार करके गाते हैं, जहाँ भी हमें कार्यक्रम करने का मौका मिलता है, हम अपने बनाए गीतों को जरूर गाते हैं। यह प्रेरणा हमें अपने ग्रुप से ही मिली है कि हम ज्यादातर अपने गाने बनाएँ और गाएँ। हम हमेशा ही यह कोशिश करते हैं कि हम उन लोगों प्रेरणा–स्त्रोत बनें, जो किसी न किसी तरह से आगे बढ़ने का संघर्ष कर रहें हैं।

स्कूल का झूठ

मेवाड़ी तो गँवारों की बोली है!

- पन्नालाल पटेल <panna_lal_patel@yahoo.com>

मैं जब स्कूल में पढ़ता था, तो एक बात मुझे सिखाई गई कि हमारी राष्ट्रभाषा हिन्दी है और हमारी राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता के लिए हमें अपनी स्थानीय बोली को छोड़कर हिन्दी को अपनाना चाहिए। हमें सभ्य बनने के लिए अंग्रेजी भाषा को अपनाना चाहिए। मेवाड़ी तो गँवारों की बोली है, वह हमारे अन्धविश्वास, रूढ़िवादिता, अज्ञानता की निशानी है तथा हमारे राष्ट्र के विकास में बाधक है।

जब मैंने मेवाड़ी बोली और लोकज्ञान पर थोड़ा काम किया और लोगों से बातचीत करना शुरू किया, तो मुझे एक महत्त्वपूर्ण बात समझ में आई कि अगर हम अपनी मातृबोली को नकार कर उसका उपयोग नहीं करते हैं, तो हम अपने वास्तविक अनुभव, अकल और कल्पनाशक्ति को भी नहीं पहचान सकते हैं। पीढ़ी दर पीढ़ी सीखने की परम्परा, लोगों के साथ आपसी रिश्ते, अपनी ताकतों को पहचानने के सबसे बड़े मौके परिवार एवं स्थानीय समुदाय में रहकर विभिन्न कामों के साथ जुड़ाव से ही समझ सकते हैं। मुझे इस दोहे से विशेष प्रेरणा मिलती है –

परिपूरण जो व्हे प्रथम, निज भाषा री नींम।
वधियां मजबूती वणै, ऊपर भार असीम।।

यानि अपनी बोली या भाषा पर अगर हमारी पकड़ अच्छी है तो कोई भी भार या समस्या आए, हम उसका हल आसानी से निकाल सकते हैं। अपनी स्थानीय बोली के माध्यम से ही हम अपनी संस्कृति में मौजूद लोकज्ञान (स्थानीय तकनीकी व हुनर) लोकगीत–संगीत, कहानियों, कहावतों, मुहावरों, रीति–रिवाजों, त्योंहारों, नाटकों और सहज अभिव्यक्ति के विभिन्न माध्यमों (माण्डणा आदि) को गहराई से समझ सकते हैं।

इससे मुझे एक बात और समझ में आई कि हिन्दी और अंग्रेजी को प्रोत्साहित करने का असली मकसद क्या है? हिन्दी व अंग्रेजी का मूल ध्येय राष्ट्रीयता की भावना को बढ़ाना और इस घटिया व्यवस्था को बनाए रखना है। राष्ट्रीय एकता के नाम पर हमारी विविध संस्कृतियों और पारम्परिक ज्ञान को खत्म करना है। व्यवस्था चलाने वाले लोग चाहते हैं कि आम लोग राष्ट्रहित के लिए अपने पारम्परिक ज्ञान एवं बोली का त्याग कर दें, ताकि वे व्यवस्था का प्रतिरोध न कर सकें और सत्ता में विश्वास बनाए रखें, इसके लिए चाहे उनकी संस्कृति का विनाश ही क्यों न हो! उदाहरण के तौर पर हम किन्हीं दो अलग–अलग क्षेत्रों के शहरों की संस्कृति को देखें, वहाँ लोगों के रहन–सहन में एकरूपता नजर आएगी। लेकिन अलग–अलग क्षेत्र के गाँवों की संस्कृति में हमें बहुत विविधता देखने को मिल सकती है। क्योंकि उनकी स्थानीय बोलियाँ अभी जीवित हैं। मुझे लगता है कि हमारी यह विविधता स्थानीयता के बल पर ही है, यह हमारी असली ताकत और सुन्दरता है। मैं देखता हूँ कि जहाँ–जहाँ स्थानीय बोली ज़िन्दा है, वहाँ–वहाँ लोगों में, समुदायों में आपसी विश्वास, सहयोग और परस्पर प्रेम की भावना भी ज़िन्दा है। अगर हम किसी भी गाँव में चले जाए तो प्रेम व रोटी तो मिलेगी ही, चाहे वहाँ की बोली हम जानते हों या नहीं। लेकिन अगर हम किसी शहर में चले जाए तो ये प्रेम और खाना मिलेगा कि नहीं यह सोचनीय बात है।

मेरा तो अनुभव कहता है कि लोग हिन्दी, अंग्रेजी न जानते हुए भी बहुत साल पहले भी भारत के चारों धामों की यात्राएँ करते थे। वे भी वहाँ के लोगों के साथ बातचीत करते थे। उनके साथ तो कभी कोई परेशानी नहीं हुई, फिर लोग केवल हिन्दी और अंग्रेजी के ही पीछे क्यों पड़े हैं और बहुत सी जीती–जागती बोलियों और भाषाओं को खत्म करने पर तुले हुए है? मुझे लगता है कि अगर हमें आधुनिक समय की समस्याओं का हल निकालना है और नये विकल्प बनाने हैं तो वह स्थानीय बोलियों के माध्यम से ही सम्भव है।

यह सोचनीय बात है कि आज दुनिया में मेवाड़ जैसे देश अपनी स्थानीय बोली को बचाने के लिये प्रयास कर रहे है। जब ये सब बातें समझ में आई तो मैं अपनी मातृबोली मेवाड़ी में काम करते हुए इसमें छुपे ज्ञान के विविध रूपों को समझते हुए उसे (मेवाड़ी में) एक प्रपत्र 'आपणी वात' के माध्यम से बच्चों और युवाओं के सामने रखने का प्रयास कर रहा हूँ। साथ ही यह भी प्रयास है कि यहाँ के लोग अपनी अभिव्यक्ति के विभिन्न मौकों को समझे। यहाँ के पारम्परिक काम और उससे जुड़े प्रकृति के रिश्तों को लेकर एक छोटा सा प्रयास किया है कि लोगों के अनुभवों व कहानियों, भजनों के साथ 'कैणी के रे कागला', 'हुँकारा दे रे वागळा' और 'सीख सरीरां उपजे' नामक पोथियों में लोकज्ञान के विभिन्न पक्षों को सामने रखा है। अभी मैं एक छोटा सा काम यहाँ के लोकमीडिया जैसे गवरी, गैर आदि को लेकर उनके संकलन व वीडियो बनाने का प्रयास कर रहा हूँ।

प्रतियोगिता के कुछ फायदे!

१०. भेड़चाल और अन्धी–दौड़ को बढ़ावा मिलेगा।
९. हारने वालों को 'नालायक' साबित किया जा सकेगा।
८. आपसी रिश्तों को आसानी से तोड़ा जा सकेगा।
७. अन्त:प्रेरणा और विवेक को खत्म किया जा सकेगा।
६. देखा-देखी और लालच की भावना बढ़ेगी।
५. जोखिम उठाने और नए प्रयोग करने की सम्भावनाओं को खत्म किया जा सकेगा।
४. नए-नए दुश्मन बनाने के लिए अच्छा माहौल बन पाएगा।
३. ऊँच-नीच की भावना को मजबूत किया जा सकेगा।
२. लोगों की विभिन्न विशेषताओं को नष्ट करके उन्हें एकरूपता में ढाला जा सकेगा।
१. खुद को पहचानने के झंझट से मुक्ति मिल पाएगी।

अपने अनुभवों के आधार पर आप भी इस सूची में कुछ फायदे (!) जोड़ सकते हैं।

-शिक्षान्तर समूह-

कर्ममार्ग : करके सीखने का अनूठा मौका

'कर्ममार्ग' एक ऐसी जगह है, जहाँ बच्चे और युवा सब मिलकर काम करते हुए सीखते हैं। इनका विशेष काम 'कबाड़ से जुगाड़' का है। कपड़े की कतरन, जूट, कागज, लकड़ी जैसे छोटे–बड़े हर तरह के कबाड़ से ये नई उपयोगी चीजें बनाते हैं। इनके अतिरिक्त ये लकड़ी की चीजें और स्क्रीन प्रिंटिंग का काम भी करते हैं। यह एक ऐसा स्थान हैं जहाँ पर कबाड़ से जुगाड़ में रुचि रखने वाले स्वपथगामी कुछ दिन रह सकते हैं और साथ मिलकर सीख सकते हैं। हम चार साथियों को इनके साथ 10 दिन रहकर सीखने का मौका मिला।

''यहाँ मैंने देखा कि कबाड़ से बनी तमाम चीजें केवल सजावट के लिए नहीं है, बल्कि दैनिक उपयोग में लाने योग्य हैं। यहाँ कागज के फोल्डर बनाने का अनुभव मेरे लिए बिल्कुल नया था। इनके लिए हमने पुराने हैण्डमेड पेपर का इस्तेमाल किया और उस पर कटे–फटे पतंग के रंगीन कागज चिपकाकर उन्हें आकर्षक बनाया। फोल्डर बनाते समय मैंने कुछ नए प्रयोग भी किए। फोल्डर मेरे रोजमर्रा के काम की चीज है, जिसे मैं अब अपने घर पर ही बनाकर इस्तेमाल कर सकता हूँ। यहाँ बनी चीजों को ये खुद इस्तेमाल करने के बेचते भी हैं। इन चीजों को बनाने के लिए ये फैक्ट्रियों से भी कबाड़ लाते हैं। मुझे लगता है कि कारखानों से निकले कबाड़ को इस्तेमाल करके ये प्रकृति को प्रदूषण–मुक्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यदि फैक्ट्रियों से पैदा होने वाले कचरे को लेकर लोगों से संवाद किया जाए, तो कचरे की समस्या का हल निकालने में मदद मिलेगी। मेरे मन में ये प्रश्न हैं कि जो लोग कबाड़ से बनी चीजों को खरीदते हैं, वे अपने घर से पैदा होने वाले कबाड़ के बारे में कितना सोचते हैं? अपने घर के कबाड़ को कैसे नियन्त्रित कर सकते हैं?''

— विशाल सिंह धायभाई

''यहाँ कबाड़ (रद्दी कागज, कपड़े की कतरन, जूट के टुकड़े ...) से बैग बनाने का मेरा अनुभव बहुत अच्छा रहा। मैंने यहाँ के साथियों के साथ कई प्रकार के छोटे–बड़े और विभिन्न डिजाइन वाले बैग बनाए। पेपर–बैग मेरे लिए बहुत उपयोगी हैं, क्योंकि मैं जब भी कोई सामान लेने जाता हूँ, तो अकसर यह समस्या रहती है कि बिना प्लास्टिक की थैली के सामान किसमें लाया जाए? जानवरों, पेड़–पौधों और पानी पर प्लास्टिक की थैलियों के असर को मैं देख चुका हूँ। इसलिए मुझे ऐसे विकल्प की तलाश थी, जो प्रकृति के प्रति जिम्मेदार बनने में मेरी मदद कर सके। अब मैंने अपने घर पर भी कागज की थैलियाँ और छोटे–बड़े बैग बनाने शुरू कर दिए हैं। अब जब भी दुकान जाता हूँ, अपने साथ अपने हाथ से बनाया हुआ बैग लेकर जाता हूँ। इन थैलों में इस्तेमाल की गई चीजों को खरीदने की जरूरत नहीं है। मैं इनको घर में उपलब्ध चीजों से ही बहुत सुन्दर और कलात्मक बना सकता हूँ। बेकार प्लास्टिक या जूट की रस्सी, कतरनों और प्राकृतिक रंगों (मेहँदी, कुमकुम, हल्दी...) की चित्रकारी से ये खूबसूरत बनाए जा सकते हैं।''

— सन्नी गन्धर्व

''यहाँ पर मैं खासकर कबाड़ से बनी फ्रेम से प्रभावित हुआ। फ्रेम मेरे लिए अकसर काम आने वाली चीज है। क्योंकि मैं अपने भाई के साथ मिनिएचर पेंटिंग सीख रहा हूँ और इन पेंटिंग्स को फ्रेम करवाने के लिए मुझे बाजार पर निर्भर रहना पड़ता है। मैं अब तक बाजार से खरीदे रंगों से कपड़े पर ही पेंटिंग करता रहा हूँ। मेरी सोच थी कि पेंटिंग तो केवल कपड़े या कागज पर ही हो सकती है। लेकिन कर्ममार्ग में मुझे अपनी कला को अलग तरह से समझने का मौका मिला। मैंने विभिन्न चीजों से फ्रेम बनाए और कबाड़ से बनी विभिन्न चीजों पर चित्रकारी के प्रयोग किए। इससे प्रेरित होकर मैं जूट व कागज के थैलों, घर में उपलब्ध चीजों पर भी चित्रकारी कर रहा हूँ। मेरी यह समझ भी बनी है कि बाजार के बिना भी घर में उपलब्ध चीजों को कलात्मक बनाया जा सकता है।''

— निर्मल प्रजापत

''कर्ममार्ग में मैंने चार बच्चों के साथ ज्यादा समय बिताया। इन चारों (महुवा, राजू, प्रियंका, आनन्द) को आमतौर पर लोग 'मानसिक रूप से कमजोर' मानते हैं, लेकिन मैंने उनके व्यवहार और अनुभवों से यह महसूस किया कि उनमें बहुत सारे अच्छे गुण हैं, जिन्हें आमतौर पर लोग पहचानते नहीं हैं। कबाड़ से चीजें बनाने और संगीत में इनकी बहुत रुचि है। मैंने महुवा के साथ कबाड़ से वाद्ययन्त्र बनाए और मिलकर अपना संगीत बनाया। वाद्ययन्त्र बनाने और नया म्यूजिक बनाने की प्रक्रिया में मैंने महसूस किया कि एक–दूसरे पर विश्वास और आपसी प्रोत्साहन से हर व्यक्ति को अपनी कला पहचानने का मौका मिल सकता है। कर्ममार्ग इन बच्चों के लिए ऐसा परिवार है, जहाँ पर ये परस्पर देखभाल, जिम्मेदारी और संवेदनशीलता के साथ सीखने की प्रक्रियाओं को बढ़ा रहे हैं। मैं इस अनुभव से प्रेरित हुआ कि जिन बच्चों को स्कूल में 'मन्दबुद्धि' कहकर नकार दिया जाता है, वे बच्चे इस माहौल में अपनी अभिव्यक्ति के विभिन्न आयाम विकसित कर रहे हैं।''

— विनोद रावल

जियोलॉजिस्ट बना फिल्म–मेकर

श्री सुभाष दास एक फिल्म–मेकर हैं, जिन्होंने जियोलोजिस्ट की नौकरी छोड़कर फिल्मों को अपनी अभिव्यक्ति और सृजन का माध्यम बनाया। हाल ही में इनकी फिल्म 'A, B, She' (यह उड़िया फिल्म है, जिसमें अंग्रेजी सब–टाइटल्स भी दिए गए हैं) को राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। फिल्म–निर्माण में रुचि रखने वाले स्वपथगामियों को ये अपने अनुभव बाँटने के लिए आमन्त्रित करते हैं। इनसे हुई बातचीत इन्हीं के शब्दों में प्रस्तुत है :–

जियोलॉजिस्ट की नौकरी में सन्तोष नहीं मिला, तो अपनी असली रुचि को खोजने की शुरूआत हुई। मेरे सामने दो दुनियां थीं – एक उपभोक्तावादी और दूसरी आध्यात्मिक। पहली दुनिया शुरू से ही पसन्द नहीं आई। इसलिए नौकरी छोड़कर आत्मिक सुख व वास्तविक रुचि को खोजने के लिए मैंने फिल्मों को माध्यम बनाया। मुझे लगा कि फिल्म–निर्माण के जरिये मैं अपनी रुचि और खोज को बरकरार रख सकता हूँ और अपनी बात को ज्यादा लोगों तक पहुँचा सकता हूँ।

अपने जीवन के अनुभवों और विचारों को अभिव्यक्त नहीं कर पाने की बेचैनी ने फिल्मों से मेरे जीवन को गहनता से जोड़ दिया। आर्थिक तंगी और संसाधनों की अनुपलब्धता के बावजूद मैंने अपने भीतर के कलाकार को फिल्मी परदे पर चित्रित करने की जिज्ञासा को कायम रखा। फिल्म निर्माण का काम शुरूआत में थोड़ा मुश्किल लगा। धीरे–धीरे दोस्तों की मदद से कुछ संसाधन जुटाए, फिल्में बनाने वाले विभिन्न लोगों से मिला और कलात्मक फिल्मों को ध्यान से देखना शुरू किया। और 1987 में डॉक्यूमेंट्री फिल्में बनाना शुरू कर दिया।

आज मैं एनिमेशन फिल्में, सीरियल्स और फीचर फिल्में भी बनाता हूँ। फिल्मों के माध्यम से मैं अपने जीवन से जुड़े मुद्दों, विचारों और प्रश्नों को लोगों के समक्ष प्रस्तुत करता हूँ। अधिकांशतः शहरीकरण, वैश्वीकरण और उपभोक्तावाद के बीच उलझे जीवन के सवालों को संवाद का विषय बनाने का प्रयास करता हूँ। फिल्में बनाने की पूरी प्रक्रिया में मैंने खुद प्रयोग करते हुए तथा लोगों के साथ काम करते हुए बहुत सीखा है। हमारी टीम के अधिकांश साथी पिछले कई सालों से साथ काम कर रहे हैं। आज हमारे पास जो अनुभव है, वो टीम के आपसी सहयोग की बदौलत है।

फिल्मों में मैं अपने निजी अनुभवों, फिल्म की थीम और प्रस्तुति की कलात्मकता को ज्यादा अहमियत देता हूँ। मेरे ख़्याल से फिल्में बनाने व सीखने की प्रक्रिया में खुद की रुचि, लगन और खोज बहुत महत्त्वपूर्ण है। फिल्म के तकनीकि पक्ष को भी साथ काम करते हुए अनुभव से ही सीखा जा सकता है, जिसके लिए किसी औपचारिक कोर्स की जरूरत नहीं है।

सम्पर्क :– Subas Das, M-4/39, Acharya Vihar, Bhubaneshwar – 751013 (Orissa) Phone : 0-9437089565, Fax : 0674-2543953, e-mail : subas5@rediffmail.com

अपना स्वास्थ्य अपने हाथ

- रामावतार सिंह <ramawtarsingh@yahoo.co.in>

लगभग 7 माह पूर्व तक मैं अपने स्वास्थ्य के लिए अस्पताल और डॉक्टरों पर निर्भर था। विशेषकर पेट–दर्द के लिए तो मैं अंग्रेजी दवाइयों का आदी–सा हो गया था। सामान्यतः सप्ताह में एक बार अस्पताल का चक्कर लगाना मेरे लिए साधारण सी बात हो गई थी। अपने स्वास्थ्य को मैंने अपने हाथ में लेना तब शुरू किया, जब मुझे अहसास हुआ कि स्वास्थ्य समस्याओं के निदान के साधन मेरे आसपास प्रकृति में ही मौजूद हैं। मैंने सबसे पहले ग्वारपाठे का उपयोग करना शुरू किया। इसके नियमित उपयोग और प्रभावों के बाद मैंने तय किया कि मैं यथा–सम्भव अस्पताल जाकर किसी प्रकार की दवा नहीं लूँगा। मेरे इस निर्णय के बाद मैंने अपने शरीर को ठीक तरह से समझने और इसे संयमित करने पर ध्यान देना शुरू किया है। उसके बाद मैं अस्पतालों और अंग्रेजी दवाइयों के षड्यन्त्र को भी समझ पाया हूँ। अब मैं निरन्तर प्राकृतिक एवं स्व–चिकित्सा के प्रयोग करता हूँ और ऐसे स्थानों व अनुभवी लोगों की खोज में हूँ, जो मुझे अपने स्वास्थ्य को समझने व सीखने में मदद कर सकते हैं।

पिछले दिनों मैं गुणी आश्रम के सम्पर्क में आया। गुणी आश्रम ऐसे लोगों का समुदाय है, जो पारम्परिक रूप से प्राकृतिक चिकित्सा के प्रयोग कर रहा है। यहाँ के तमाम शोध एवं प्रयोग उनके निजी अनुभवों पर आधारित है। इस आश्रम और इससे जुड़े गुणियों के साथ मुझे दो दिन बिताने का मौका मिला। इन गुणियों के पास न तो किसी प्रकार की डिग्री है और न ही इन्होंने कोई औपचारिक कोर्स किया है। इनके साथ रहकर मैंने कुछ ऐसे औषधीय पौधों और उनके उपयोग के बारे में जानने का प्रयास किया, जो सामान्यतः हमारे आसपास के जंगलों में उपलब्ध हो सकते हैं।

जागरण जन विकास समिति ने इनके ज्ञान और अनुभवों को पहचानकर प्राकृतिक चिकित्सा को पुनर्जीवित करने के लिए गुणी आश्रम स्थापित किया है। इस आश्रम में स्थानीय क्षेत्र के गुणी अपने अनुभवों का आदान–प्रदान करते हैं और जड़ी–बूटियों से दवाइयाँ तैयार करते हैं। गुणियों के निजी अनुभवों को आपस में बाँटने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं, जिनमें सामान्यतः – जंगल में जाकर जड़ी–बूटियों को पहचानना, एक ही पौधे के अलग–अलग उपयोग की जानकारियाँ बाँटना और दवाइयाँ एवं टॉनिक तैयार करना शामिल होता है। यहाँ काम करने वाले अधिकांश लोग स्वपथगामी हैं। गुणी आश्रम स्वपथगामियों के सीखने के लिए उपयुक्त जगह है, जहाँ जाकर कुछ दिन रह सकते हैं या किसी प्रशिक्षण कार्यक्रम में भी भाग ले सकते हैं। अधिक जानकारी के लिए निम्न पते पर सम्पर्क करें :– श्रीमती भँवर धाभाई,
जागरण जन विकास समिति, बेदला
उदयपुर (राजस्थान) फोन : 0294–2441322 / 2441932

जैविक काम-धन्धों का संगम

स्वपथगामियों का अगला मिलनोत्सव मार्च, 2005 में अहमदाबाद में होगा। यह विशेषकर उन स्वपथगामियों के लिए अच्छा मौका है, जो छोटे जैविक उद्यम शुरू करना चाहते हैं, जिसमें वे अनुभवी लोगों के साथ अपने बिजनेस–प्रस्तावों पर सलाह–मशविरा भी कर सकेंगे। विविध क्षेत्रों (ऑर्गेनिक खाद्य पदार्थ, जैविक खाद, हस्तकला उद्योग, प्रकाशन ...) में अपना उद्यम शुरू कर चुके स्वपथगामियों के साथ हम ऐसे काम–धन्धों की पहचान कर सकेंगे और सीख सकेंगे, जो हमारी आर्थिक जरूरतों की पूर्ति के लिए हमें वैश्विक बाजार से मुक्त करे और शोषणमुक्त एवं परस्पर सहयोगी प्रक्रियाओं से जोड़ें। इन उद्यमों से जुड़े स्वपथगामी इस बात का जीवन्त उदाहरण है कि अपनी आर्थिक जरूरतों की पूर्ति करते हुए भी वे वैश्विक–व्यवस्था के नियन्त्रण से मुक्त हो सकते हैं और ऐसी दुनिया का निर्माण कर सकते हैं, जो न्याय, ईमानदारी, विश्वास और आपसी सहयोग की नींव पर टिकी होगी।

यह उत्सव विविधताओं से परिपूर्ण होगा, जिसमें प्रेक्टिकल कार्यों के लिए कुछ सहयोग भी किया जा सकेगा, जैसे – ऑफिस या दुकान लगाना, अपनी टीम तैयार करना, आर्थिक प्रबन्ध आदि। यहाँ हम मिलकर अपने जीवन से सम्बन्धित मुद्दों और सम्भावनाओं को खोजेंगे – जैसे स्थानीय मुद्राएँ, स्थानीय आर्थिक–व्यवस्था, बुनियादी आवश्यकताएँ और साधारण जीवन, बाजार के साथ हमारे रिश्ते को पुनर्परिभाषित करना आदि।
सम्पर्क करें :– शिल्पा जैन <shilpa@swaraj.org>

विनोद रावल (1984-2004)

वो अनन्त जोश से परिपूर्ण और हँसता-गाता कलाकार।
वो राही मुक्त रास्तों का और एक अनूठा चित्रकार।
झिझक नहीं होती थी जिसको, किसी काम को करने में,
जाने कैसे जुदा हुआ, होकर दुनिया से निराकार।

सदा रहेगा बीच हमारे, यादों और विचारों में।
रहे महकती खुशबू उसकी, यूँ हर वक्त बहारों में।
शिक्षान्तर परिवार उसको कभी भुला ना पाएगा,
प्रेरक बनकर सदा रहेगा, आँगन और दीवारों में।

शिक्षान्तर परिवार का 20 वर्षीय सदस्य विनोद रावल (उदयपुर) 12 दिसम्बर, 2004 को कोणार्क समुद्र–तट पर नहाते समय भौतिक जगत से विदा हो गया।

हम युवा स्वपथगामियों के लिए वह एक प्रेरणा है, जिसने अपना हर पल नए दोस्त बनाने, नए प्रयोग करने और निरन्तर सीखने में बिताया। विनोद की यादें और उसके साथ रहे हमारे अनुभव उसे हमेशा हमारे बीच होने का आभास दिलाते रहेंगे। आप भी विनोद के साथ बिताए पलों को हमारे साथ बाँट सकते हैं, ताकि हम उसे अपने बीच महसूस कर सकें।

स्वपथगामी का यह अंक प्रिय विनोद को समर्पित है।

आमन्त्रण

आज हमारे सामने यह बहुत बड़ी चुनौती है कि हम इस बनी–बनाई दुनिया में अपनी पहचान और अपने तरीके से जीवन जीने की आजादी को कैसे कायम रखें? अमानवीय व्यवस्था के चक्रव्यूह से निकलकर अलग–अलग विकल्प कैसे बनाएँ? आज यह जरूरी हो गया है कि हम अपनी क्षमताओं को पहचानकर सृजनात्मक जीवन जीने की शुरूआत करें, जिसमें हम आपसी विश्वास एवं अन्तर्निर्भरता की नींव पर आधारित स्वराज हासिल कर सकें। इसके लिए हर व्यक्ति को अपने सीखने की प्रक्रिया को अपने हाथ में लेना पड़ेगा।

यह पत्रिका शोषणमुक्त जीवन जीने और अपने रास्ते खुद बनाने वाले स्वपथगामियों द्वारा शुरू किया गया एक प्रयास है। अलग–अलग समुदायों, समूहों और व्यक्तियों के साथ संवाद स्थापित करने की यह एक कोशिश है, जिसके माध्यम से हम न केवल अपने अनुभवों का आदान–प्रदान करेंगे, बल्कि ऐसे लोगों, संस्थानों और स्थानों से भी रू–ब–रू होंगे, जो हमारे सीखने के सन्दर्भ बन सकते हैं।

पत्रिका में जिन नए अवसरों का उल्लेख किया गया है, उनके बारे में विस्तृत जानकारी के लिए आप उनसे सीधा सम्पर्क कर सकते हैं और उनके साथ मिलकर सीखने के बारे में बातचीत कर सकते हैं।

हम उन सभी लोगों को आमन्त्रित करते हैं, जो अपने जीवन में नए–नए प्रयोग कर रहे हैं और साथ मिलकर सीखने के मौके बना रहे हैं। **'बनी-बनाई दुनिया'**, **'स्कूल का झूठ'** और **'कुछ अवसर'** कॉलम के लिए विशेष आग्रह है कि आप भी अपने जीवन में इन चीजों को पहचानें और अपने अनुभव हमारे साथ बाँटें। साथ ही हम उन लोगों को भी आमन्त्रित करते हैं, जो इस पत्रिका के सम्पादन में सहयोग करना चाहते हैं। अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :–

रामावतार सिंह <ramawtarsingh@yahoo.co.in>
अमित <indore_amit@rediffmail.com>
C/O शिक्षान्तर, 21 फतेहपुरा, उदयपुर – 04 (राजस्थान)
फोन – 0294–2451303